|| श्रीहरिः ||
वसुदेवसुतं देवं कंसचाणूरमर्दनम् |
देवकीपरमानन्दं कृष्णं वन्दे जगद्गुरुम् ||

|| श्रीमद्भगवद्गीता विवेचन सारांश ||

अध्याय 16: दैवासुरसंपद्विभागयोग

1/2 (श्लोक 1-3), रविवार, 10 नवंबर 2024

विवेचक: गीता प्रवीण रूपल जी शुक्ला

यूट्यूब लिंक: https://youtu.be/Y4MX8SjqHBk

दैवीय गुण प्राप्त मनुष्य के लक्षण

देश भक्ति गीत, दीप प्रज्जवलन, श्रीकृष्णजी की प्रार्थना, गुरु वन्दना से विवेचन का प्रारम्भ हुआ।

गीता परिवार से जुड़ कर हम सभी नित्य श्लोकों का शुद्ध उच्चारण करना सीख रहें हैं, साथ ही उन श्लोकों की विवेचना सुन कर श्लोकों का अर्थ समझने के साथ ही साथ साधना मार्ग पर आगे बढ़ रहें हैं।
उपनिषद् में भी कहा गया है-

नायमात्मा प्रवचनेन लभ्यो न मेधया न बहुना श्रुतेन।
यमेवैष वृणुते तेन लभ्यस्तस्यैष आत्मा विवृणुते तनूं स्वाम् ॥

हमारा चयन किया गया है, वरना साधन मार्ग और अध्यात्म के मार्ग पर चलना इतना आसान नहीं है। चयन नहीं होता तब तक हम आगे बढ़ भी नहीं सकते। भगवान में मन, बुद्धि लग जाय, यह इतना कठिन भी नहीं है। भगवान हमारा साथ देते हैं। सोलहवें अध्याय का विवेचन प्रारम्भ करते हैं। गीताजी की पूर्णाहुति पन्द्रहवें अध्याय में ही हो गयी थी। सोलहवाँ और सत्रहवाँ अध्याय परिशिष्ट माना जाता हैं और अठारहवें अध्याय में गीताजी का सार है। ऐसा माना जाता है। सोलहवें अध्याय में वह बात कही गई है, जो भगवान नौवें अध्याय में बता रहे थे। राजविद्याराजगुह्ययोग, ज्ञानयोग के बारे में बता रहे थे, बीच में ही अर्जुन ने कुछ प्रश्न कर लिए। विषय बदल गया, श्रीभगवान उन्हीं प्रश्नों का उत्तर देने लगे। श्रीभगवान कोई भी विषय छोड़ते नहीं हैं। पुनः उसी विषय पर सोलहवें अध्याय में आ जाते हैं।

देवासुरसम्पद् में सम्पदा क्या मतलब है? हमारे पास अपने गुणों की सम्पदा है। कितने दैवीय गुण हैं, कितने आसुरी? हम इसका आकलन करेंगे। सम्पदा दोनों प्रकार की हो सकती है। गुणों के बारे में बता कर भगवान यह नहीं कहते कि यह करो, यह मत करो। शास्त्र हमें दिशा देते हैं कि ये करो, ये मत करो। इसका निषेध है, इसकी विधि है। विधि, निषेध का पता चलने पर यह हमारे ऊपर है कि हम किसका पालन करें। विधि का पालन करेंगे तो धर्म का पालन होगा और पुण्य मिलेगा। ठीक इसके विपरीत निषेध के पालन से अधर्म होगा और पाप मिलेगा। दैवीय और आसुरी सम्पदा के इस अध्याय को पढ़ने के बाद, दोनों के गुण पता होने से हमें अपना आकलन करना चाहिए कि प्रत्येक गुण में हमें दस में से चार, पाँच, छह कितने अङ्क प्राप्त हुए है। वैसे ही जैसे परीक्षा में हमें परीक्षाफल में अङ्क मिलते हैं।

रामसुखदासजी महाराज एक बार सत्सङ्ग कर रहे थे। उन्होंने कहा कि हम सब को मोक्ष की प्राप्ति होगी। सभी साधकों को बहुत प्रसन्नता हुई, महाराज जी ने कहा है, तो मोक्ष की प्राप्ति होगी ही। उन्होंने कहा कि अपने स्वरूप को जानने से ही मोक्ष की प्राप्ति होगी।

ममैवांशो जीवलोके जीवभूत: सनातन:।
मन: षष्ठानीन्द्रियाणि प्रकृतिस्थानि कर्षति।।

जीव भूत परमात्मा का ही अंश हैं। इसका अनुभव हो जाना ही अपने स्वरूप को पहचानना है। इसी को रामसुखदासजी महाराज मोक्ष की प्राप्ति बता रहें हैं। फिर थोड़ा रुक कर रामसुखदासजी ने कहा, मोक्ष की प्राप्ति स्वयं हम पर निर्भर है। कब और कहाँ, इस जन्म में मोक्ष की प्राप्ति होगी या अगले कई जन्मों के बाद। यह हमारी साधना की गति पर निर्भर करेगा।

उदाहरण- जैसे हमारा गन्तव्य निश्चित किया हुआ है। अगर वहाँ हम सौ किलोमीटर की गति से जाएँगे तो कम समय लगेगा, उससे कम की गति पर जाएँगे तो अधिक समय लगेगा। जितना साधना के मार्ग पर बढ़ते जाएँगे, हम अपने स्वरूप को पहचान सकेंगे।

आगे सौलहवें अध्याय में महत्वपूर्ण विषय आने वाले हैं। पहले, दूसरे, और तीसरे श्लोकों को एक साथ ले लेंगे। इन तीनों में ही दैवीय सम्पदा के बारे में बताया है।

16.1

श्रीभगवानुवाच
अभयं(म्) सत्त्वसंशुद्धिः(र्), ज्ञानयोगव्यवस्थितिः।
दानं(न्) दमश्च यज्ञश्च, स्वाध्यायस्तप आर्जवम्।।16.1।।

श्रीभगवान बोले – भय का सर्वथा अभाव; अन्तःकरण की अत्यंत शुद्धि; ज्ञान के लिये योग में दृढ़ स्थिति; सात्त्विक दान; इन्द्रियों का दमन; यज्ञ; स्वाध्याय; कर्तव्य-पालन के लिये कष्ट सहना और शरीर-मन-वाणी की सरलता।

विवेचन- इन तीनों श्लोकों में दैवीय गुणों का सार बताया है।

1 **अभयं**
जीवन में जब तक निर्भयता नहीं आती, तब तक ये दैवीय गुण टिक नहीं पायेंगे। भगवान पर श्रद्धा होने से भय नहीं रहता। यह विश्वास हो जाता है कि ठाकुरजी हमारे लिए जो भी करते हैं, वो हमारे कल्याण के लिए करते हैं। इस विश्वास मात्र से, कुछ बुरा, ग़लत होने का भय ख़त्म हो जाता है। भगवान पर श्रद्धा और विश्वास से निर्भयता आती है। कोई भी कष्ट आता है तो ये हमारे बुरे कर्मों का फल है। कष्ट से पापों का क्षय होता है। तुलन पत्र अर्थात् बैलेंस शीट से पाप और पुण्य दोनों ज़ीरो होंगे , तभी मोक्ष की प्राप्ति होगी। पुण्यों का उपभोग और कष्ट झेलने से पाप और पुण्य ज़ीरो होंगे।

2 **सत्त्व-**
सत्त्व का तात्पर्य शास्त्रों में मन से लिया गया है। सत्त्व मन और गुण दोनों ही है। यहाँ पर अन्तःकरण की शुद्धि के लिए कहा गया है। यह एक दैवीय गुण है।

प्रत्येक दिन नाना प्रकार की घटनाएँ घटित होती हैं, कई लोगों से वार्तालाप होते हैं। किन्तु किसी से भी राग द्वेष नहीं रखें, किसी का भी बुरा नहीं सोचें तो अन्त:करण शुद्ध होने लगता है। यह हमारा दैवीय गुण है। जितनी शीघ्रता से हम दैवीय गुणों को धारण कर लेंगे, वही हमारा मापदण्ड हो जाएगा कि हम कितनी गति से आगे बढ़ रहे हैं।

3- ज्ञानयोग व्यवस्थिति:
किसी भी वस्तु को कैसे देखते हैं? कैसे आकलन करते हैं! यही ज्ञानयोग व्यवस्थिति है। हमारे चतुर्दिक घटनाएं घटित हो रही हैं, किन्तु हमें उनका हिस्सा होते हुए भी उनमें आसक्ति नहीं होनी चाहिए। हमें ज्ञान होना चाहिए कि गुण ही गुणों में वर्तते हैं।

तत्त्ववित्तु महाबाहो गुणकर्मविभागयोः।
गुणा गुणेषु वर्तन्त इति मत्वा न सज्जते॥
3:28

ज्ञानीजन आसक्त नहीं होते हैं, वे द्रष्टा भाव से घटना को देखते हैं। हममें आसक्ति का भाव आये तो श्रीमद्भगवद्गीता का स्मरण करना चाहिए।

उदहारण -
एक व्यक्ति को मिलने उसके घर मित्र आये। वह स्वयं अत्यन्त दुःखी होकर रुदन कर रहा था कि व्यापार में हानि हो गयी है। उसकी पत्नी अतिथि हेतु जलपान लेकर उल्लासित होकर आयी। अतिथि मित्र अचम्भित हुआ कि पति दुःखी है और पत्नी उल्लासित है। पूछने पर गृहिणी ने बताया कि दस लाख का लाभ होना था किन्तु आठ का ही हुआ है। इस वर्णन में हानि तो नहीं हुई है। अपेक्षा दस लाख की थी, किन्तु आठ प्राप्त हुए। एक ही परिस्थिति को दो व्यक्ति भिन्न -भिन्न प्रकार से देखते हैं। यह उनकी दृष्टि पर निर्भर करता है।

एक भजन है -

राम राम जय राजा राम ।
पावन भिक्षा दे दो राम।।

इसमें एक पङ्क्ति है -
अर्थारोहण दे राम।

अर्थारोहण दे दो राम।
अर्थ का मतलब यहाँ धन से है। रोहण अर्थात् हम धन के अर्जन में लिप्त हो जाय। एक लाख कमाया तो दो की अपेक्षा, पाँच लाख अर्जन किया तो दस लाख की अपेक्षा। यह शह नहीं होना चाहिए। कलियुग है, धन को अपनी ओर खींचना स्वाभाविक ही है, पर हमें आवश्यकतानुसार धन का सङ्ग्रह करना चाहिए। हम भविष्य में साधारण जीवन जी सकें, उतना ही सङ्ग्रह करें, बाद के बाक़ी धन को लोक कल्याणार्थ लगा देना चाहिए। दान कर देना चाहिए।

सङ्ग्रह का भाव अगर मस्तिष्क में रहेगा तो हरि का नाम मन, बुद्धि में कहाँ से आएगा? श्रीभगवान ने कहा है-

अन्तकाले च मामेव, स्मरन्मुक्त्वा कलेवरम्।
यः(फ्) प्रयाति स मद्भावं याति नास्त्यत्र संशयः॥
8:5॥

सिर्फ़ राम नाम का जप करें। क्या पता कब प्राण निकल जाएँगे। राम नाम करते हुए अगर प्राण निकल ही गये तो कितना कल्याण होगा! जीवन भर कुछ भी किया होगा, किन्तु अन्त समय में राम नाम से भगवान का धाम मिल जायेगा। यही है ज्ञान योग व्यवस्थितिम्।

4- दान
अब आता है दान, एक कथा आती है -
जब कलियुग आने वाला था, तब एक बैल था, जिसका एक ही पैर था। सतयुग में चार पैर थे, त्रेता में तीन और द्वापर में दो पैर थे। कलियुग में वह बैल मात्र एक पैर पर खड़ा था। वह एक पैर दान का है।

कल्याणकारी क्या है? एकमात्र दान। कुछ भी सङ्ग्रह न करें। भविष्य हेतु जितना आवश्यक है उतना ही रखें, अन्य सभी दान कर दें। सत्रहवें अध्याय में सात्त्विक, राजसी और तामसी दान का वर्णन विस्तार से हुआ है। दान की महत्ता है, इसीलिए श्रीभगवान बार बार दान के बारे में बता रहे हैं।

पता नहीं किस रूप में आके, भगवान मिल जाएगा।
निर्मल मन के दर्पण में, वह राम के दर्शन पाएगा।।

दान देते समय विवेक का सदुपयोग करना चाहिए। ऐसे व्यक्ति को दान दें, जो प्राप्त वस्तु का दुरुपयोग न करे। जैसे- रुपये लेकर वह शराब पीने लगे!

कलियुग में साधन मार्ग पर तीव्रता से अग्रसर होने के लिए, अधिकाधिक दान देना चाहिए। माँगने वालों से सजग रहें और विवेक से दान करें।

5- शमश्च दमश्च -
शम है मन का निग्रह और दम है इन्द्रियों का निग्रह। पाँच कर्मेन्द्रियाँ और पाँच ज्ञानेन्द्रियाँ हैं। इन्द्रियों के निग्रह हेतु हिमालय पर्वत पर जाने की आवश्यकता नहीं है। विवेक पूर्वक विचार करके कार्य करने से इन्द्रियों का निग्रह हो जाता है।

मित्र जलेबी लेकर आया। गीता की कक्षा छोड़कर जलेबी खाने बैठ गये। विवेचन सत्र है और प्रतियोगिता का प्रसारण हो रहा है। उस समय यह सोचकर कि अभी मैच देख लेते हैं। विवेचन के लिए यूट्यूब लिंक है ही। कथा श्रवण इन्द्रियों के लिए श्रेयस्कर है, किन्तु वह छोड़कर गाना सुनते हैं।

किसी भी सात्त्विक कार्य को छोड़कर इन्द्रियों की इच्छापूर्ति नहीं करनी चाहिए।

बिजली बन्द हो जाने पर, कुछ लोग दस मिनट भी बिना पङ्खे या AC नहीं रह पाते। बहुत अधीर हो उठते हैं। बिना सुविधाओं के कुछ समय शीत ऊष्णता में कम वस्त्रों में सहन करने का अभ्यास करें। स्वामी जी और अनेक सन्त महात्मा एक ही वस्त्र में रहते हैं।

अभ्यास और वैराग्य से सब बातों की प्राप्ति हो सकती है।

उदाहरण -
एक व्यक्ति सौ डिग्री तापमान के बुखार में निढाल हो जाता है। किसी को देखकर पता ही नहीं चलता कि उसे बुखार है? एक बच्चे को डेङ्गू बुखार हो गया, एक सौ तीस तापमान पर भी वह खेलकूद में लगा हुआ था। घर वालों के बहुत समझाने पर, भी विश्राम नहीं करता था।

अभ्यास से सब कुछ सम्भव है। कुछ सात्त्विक आहार के कारण भी सम्भव है।

6- यज्ञश्च-
यज्ञ हवन सामग्री से करते हैं, वह तो ठीक है। गीता जी का महायज्ञ चल रहा है। स्वार्थ रहित निष्काम भाव से दूसरों के लिए जो कार्य करते हैं, वह भी यज्ञ बन जाता है। कोरोना काल में गीता परिवार की ओर से लाखों लोगों की भोजन व्यवस्था में लोग लगे रहे। पचास साठ सेवा व्रती घूम- घूम कर भोजन वितरण करते थे। प्रत्येक सप्ताह उनका कोरोना परीक्षण होता था। उनमें से किसी को कोरोना नहीं हुआ। निष्काम भाव से लोक कल्याण हेतु किया गया कर्म यज्ञ बन जाता है।

7- स्वाध्याय -
स्वाध्याय में कमी नहीं करनी चाहिए। प्रतिदिन स्वाध्याय स्वरूप एक श्लोक पढ़ें। नया नया कुछ न कुछ करना और शास्त्रों में

स्वाध्याय का तात्पर्य पुस्तकीय ग्रन्थों का अध्ययन करना है।

एकै साधे सब सधै, सब साधै सब जाय।

रहिमन मूलहिं सींचिबो, फूलै फलै अघाय॥

पहले गीताजी को साथ लेकर, गीता शुद्ध उच्चारण से पढ़ें, विवेचन से श्लोकों का तात्पर्य जान ले, साधक संजीवनी पढ़ें। फिर समय बचे तो उपनिषदों का अध्ययन करें।

कठोपनिषद्, वृहदारण्यक उपनिषद् का अध्ययन करें। रामायण, महाभारत का अध्ययन करना चाहिए। ज्ञानयोग के लिए योग वाशिष्ठ्य का अध्ययन करना चाहिए। ज्ञान योग के लिए सबसे उत्तम ग्रन्थ है।

8- तप- विवेचन या कोई भी कार्य एकाग्रता से करते हैं, बिना हिले डुले, बिना चाय पिए, बिना खाये तो ये तप की श्रेणी में आता है। कई जन पूजा करने बैठते हैं, तो उनका पूरा ध्यान जप, तप, पूजा में ही रहता है। आस पास में क्या घटित हो रहा है, वो अनभिज्ञ होते हैं। कुछ लोग पूजा करते हुए भी उनका मन चारों तरफ़ घूमता रहता है। कौन आया, क्या हुआ, लड़ाई क्यों हुई सब के बारे में उठते ही जानकारी लेंगे। पञ्चायत करने लगते हैं। तप, स्वाध्याय व जप के लिए निरन्तर अभ्यास की आवश्यकता है। यूट्यूब देखने में कितना समय बर्बाद कर देते हैं। जप के लिए मोबाइल में भी एक ऐप आ गया है। जिसमें जो जप करते हैं, उसकी सङ्ख्या भी आ जाती है। जीवन का अन्तिम लक्ष्य भगवत् प्राप्ति का ही होना चाहिए। परम सेवा करें। परम सेवा की जाने वाले व्यक्ति के सामने भगवान की छवि, राम-दरबार ही लगा दिया। भजन सुनायें, गीताजी के श्लोक शुद्ध उच्चारण से पढ़ कर सुनायें। पन्द्रहवें अध्याय का पाठ करें। अन्तिम समय में भगवान का नाम कान में पड़ गया, मन में भी आ गया तो उसका तो कल्याण ही हो गया। यह परम सेवा है। बहुत बड़ी सेवा है। मन लगा कर पढ़ना भी तप होता है। एक माता, गृहणी दो सौ प्रतिशत मन लगा कर भोजन बनाती है, थकान का भी अनुभव नहीं करती, सबकी प्रसन्नता के लिए ही भोजन बनाती है, यह भी तप है।

9-आर्जवम्- संस्कृत में इसका अर्थ होता है, ऋजुता अर्थात् सीधी रेखा। ऋजुता का मतलब है सीधा।

शबरी माता की कथा हम सब जानते हैं। बाल्यकाल में शबरी का नाम श्रमणा था। भील जाति के, कबीले के सरदार की पुत्री थी। श्रमणा का विवाह निश्चित हुआ। वहाँ परम्परा थी कि छोटे छोटे मेमनों को पका कर खिलाया जाता था। गाँव भर से मेमने इकट्ठे कर लिए जाते थे। श्रमणा ने भी एक मेमना पाल रखा था। वह उससे बहुत खेलती और बातें भी करती थी। श्रमणा बाहर से आयी, उसका मेमना उसको नहीं मिला, वो विचलित हो गयी। पता चला, उसके विवाह के लिए मेंमने को तो पकाने के लिए ले गये। श्रमणा के तो होश ही उड़ गये। वो घर से जङ्गल की ओर भाग गयी जिससे उसका विवाह ना हो और मेंमने को मारा न जाए। भागते - भागते जङ्गल में एक जगह मूर्छित हो कर गिर गयी। उसी वन में मतङ्ग ऋषि का आश्रम था। मतङ्ग ऋषि की नज़र उस पर पड़ी, जल पिला कर उसको होश दिलाया। श्रमणा बार-बार कह रही थी, मुझे नहीं जाना। उसे लगा सरदार के लोग ढूँढते हुए आ गये हैं। मतङ्ग ऋषि ने उसकी सारी बात सुनी, और अपने आश्रम में ले आये। श्रमणा की सेवा, भक्ति से ऋषि श्रमणा से प्रसन्न रहते थे। यह बात ऋषि के अन्य शिष्यों को अच्छी नहीं लगती थी। एक दिन शिष्यों ने मिल कर श्रमणा को भगाने की योजना बनायी। ऋषि के बारे में भी कुछ कुछ कहा। श्रमणा ने सुन लिया, उसे अत्यन्त दुःख हुआ और वह आश्रम छोड़ कर पास के वृक्ष पर रहने लगी। वहाँ से भी वो ऋषि की सेवा कर देती थी। दूर-दूर से जङ्गल से लकड़ी ला कर वृक्ष के चारों ओर फैला देती। शिष्य उसे चुन कर शीध्र ले जाते थे। आश्रम की सफ़ाई और अन्य कार्य भी रात को ही कर देती। एक दिन ऋषि का ध्यान गया तो उन्होंने पता किया। उन्होंने देखा, श्रमणा ही सारा कार्य कर रही है। उनकी आँखों में अश्रु आ गये। ऋषि प्रसन्न हो गये, उसे आश्रम में अपने साथ अन्तिम समय तक रखा। जाते-जाते मतङ्ग ऋषि ने श्रमणा से कहा, तुम्हें भगवान रामजी के दर्शन होंगे। वह तो भाव विभोर हो गयी। फिर उसे ध्यान आया कि उसने पूछा ही नहीं की, कब दर्शन होंगे। भगवान कौन सी दिशा से आयेंगे। श्रमणा भगवान की प्रतीक्षा करने लगी। सभी दिशाओं में फूल के पौधे लगा दिये। उसका नाम भी शबरी हो गया। प्रभु की प्रतीक्षा करते-करते श्रमणा बूढ़ी हो गयी। राम जी आये। शबरी के आसूँ ही नहीं थम रहे थे, उसी से रामजी के पैरों का प्रक्षालन हो गया। केवट की कथा भी हम जानते हैं, केवट को तो भगवान पैर धोने ही नहीं दे रहे

थे। केवट ने तर्क के आधार पर भगवान के चरणों का प्रक्षालन किया था। भक्त के सामने भगवान की कहाँ चलती है? लक्ष्मण मन ही मन सोच रहे थे, केवट को तो चरण धोने नहीं दे रहे थे। यहाँ तो रामजी सहर्ष चरण धुला रहें हैं। वर्षों की प्रतीक्षा के बाद भगवान आये हैं। शबरी बेर ले आती है, चख कर भगवान को देती हैं, रामजी भी बड़े प्रेम से उन बेरों का स्वाद लेकर खाते हैं। रामजी लक्ष्मण को भी बेर देते हैं। उसने जूठे बेर नहीं खाए, इसलिए पीछे की ओर फेंक दिए। राज्याभिषेक के बाद पकवानों में भी रामजी को शबरी के उन बेरों जैसा स्वाद नहीं आता। भक्त के वश में हैं भगवान। रामजी ने शबरी को नवधा भक्ति का उपदेश दिया। वैसा भाव जब हम लेकर जाते हैं, तब भगवान उपदेश करते हैं।

मेरे तो गिरधर गोपाल, दूसरो न कोय।

मीराजी कहती हैं, दूसरा कोई है ही नहीं। वैराग्य लाना ज़रूरी है।

भगवान ने रङ्गमञ्च दिया है। पुत्र, पिता, भाई की भूमिका निभाना है। इससे भाग कर वैराग्य लेने से भी नहीं चलेगा। गीता हमें कर्त्तव्य कर्म करने का उपदेश देती है।

श्रेयान्स्वधर्मो विगुणः(फ्), परधर्मात्स्वनुष्ठितात्।

स्वधर्मे निधनं(म्) श्रेयः(फ्), परधर्मो भयावहः॥3:35॥

श्रीभगवान बताते हैं कि स्वधर्म में चले भी गये तो श्रेय की प्राप्ति होगी। गीता हमें भागने का उपदेश नहीं देती। शबरी जैसी सरलता अपने जीवन में लाएं। भगवान से वैसी भक्ति ही माँगें।

16.2

अहिंसा सत्यमक्रोध:(स्), त्यागः(श्) शान्तिरपैशुनम् ।
दया भूतेष्वलोलुप्त्वं(म्), मार्दवं(म्) ह्रीरचापलम्।।16.2।।

अहिंसा, सत्य भाषण, क्रोध न करना, संसार की कामना का त्याग, अन्तःकरण में राग-द्वेष जनित हलचल का न होना, चुगली न करना, प्राणियों पर दया करना, सांसारिक विषयों में न ललचाना, अन्तःकरण की कोमलता, अकर्तव्य करने में लज्जा, चपलता का अभाव।

विवेचन- **अहिंसा,** हिंसा का मतलब सिर्फ़ जीवों के प्रति हिंसा करना ही नहीं होता, अपितु मनसा, वाचा, कर्मणा से भी हिंसा होती है तो वह भी हिंसा ही हैं। कर्मों से हिंसा नहीं करेंगे, पर मन ही मन सोचेंगे, इसको तो मार ही दूँ। किसी का बुरा सोचते हैं, झगड़ा करते हैं, वो हिंसा हुई। इनसे ऊपर उठना दैवीय गुण है।

सत्य-
दैवीय गुणों को टिकाने के लिए सत्य की आवश्यकता है। जितना सत्य का पालन कम करेंगे, उतना भय होगा, अभय नहीं होगा। दो दो दैवीय गुण चले जाएँगे। कई लोग ऐसे हैं, जिन्होंने जीवन भर में एक बार भी झूठ नहीं बोला हैं। सत्य को कई जन अत्यन्त सूक्ष्मता से लेते हैं। कल की विमान की टिकट है, बाहर जाने की। वो कहेंगे, जाने का विचार है। कहीं न जा पाये तो असत्य भाषण हो जायगा।

अक्रोध-
क्रोध का विपरीत अक्रोध होता है। कई बार हमारा क्रोध इतना तीव्र होता है कि श्वास तेज हो जाती है। आँखें लाल हो जाती है। क्रोध में आवाज़ भी ठीक से नहीं निकलती है। हमेशा प्रसन्न रहना चाहिए।

त्यागः शान्तिः-
श्रीभगवान कहते हैं, त्याग से तुरन्त शान्ति मिलती है।

जितना संङ्ग्रह करते हैं उतना मैं, मेरापन बढ़ जाता है, आसक्ति हो जाती है। किसी भी वस्तु का नुक़सान होता है, तो हम दुःखी हो जाते हैं। किसी को वही वस्तु दे देते हैं, तो शान्ति मिलती है। कर्म फल का त्याग भी भगवान के सामने कर देने से शान्ति मिलती है। हमारे लिए जो कल्याणकारी है, वह भगवान स्वतः दे देंगे। शान्ति तभी आएगी जब हमारे पास विषय कम होंगे।

अपैशुनम्-
चुग़ली नहीं करना, लोगों की बात नहीं करना। चार, पाँच स्त्रियाँ बैठ कर बात किए बिना रह ही नहीं सकती। सारी बात करने के बाद कहेंगी, हमें क्या करना है। जितना दूसरो की प्रसंशा करेंगे, उतने दूसरों के प्रिय हो जाते हैं। कोई छोटा सा भी प्रयास करता है, तो उसकी प्रशंसा मन से करनी चाहिए। हम दोषग्राही हो गये हैं। किसी की प्रशंसा हम दस मिनट नहीं कर सकते हैं, निन्दा में दो घण्टे भी कम हैं। भगवान को चुग़ली करना पसन्द नहीं है।

दया-
दूसरे प्राणियों पर दया का भाव होना चाहिए। माँसाहारी के लिए ये कह सकते हैं कि अपने भोजन के लिए निरपराध पशुओं की बलि उचित नहीं है। माँसाहारी और शाकाहारी में भेद क्या है? माँसाहारी पशु कुत्ता, शेर जीभ से चाट चाट कर पानी पीते हैं, शाकाहारी मनुष्य, गाय पानी घूँट घूँट कर पीते हैं। मनुष्य का मूल स्वभाव शाकाहारी है, परन्तु वह माँसाहारी बन गया है। पुराने काल में व्यवस्था नहीं होती थी तो पशुओं को मार कर भक्षण करना पड़ता था। अब तो व्यवस्था भी बदल गयी है। नवरात्रि पर माँस का सेवन नहीं करते हैं, इसका मतलब ये खाना नहीं चाहिए, फिर भी खा रहे हैं। शाकाहारी बनें, विवेक को बढ़ायें।

लोलुप्त्वं-
पड़ोसी नयी कार ले आया तो हमें भी लानी है। भाई ने ज़मीन दुकान ख़रीदी है तो हम भी ख़रीदेंगे। लैपटॉप, साड़ी, जूते ऐसी सारी वस्तुयें दूसरों को देख कर मुझे भी ख़रीदनी है। अनावश्यक वस्तुयें भर लेंगे। साड़ियों से आलमारी भरी है, जूतों से अलग आलमारी भरी है। कौन सा क्या पहनें? इसमें ही समय लगा देते हैं। कुछ जन कुछ भी नया ख़रीदने के पहले उसी वस्तु का दान कर देते हैं। भगवान को ये लोलुपता पसन्द नहीं है। यह दैवीय गुण भी नहीं है।

मार्दवं-
अन्तःकरण की कोमलता। हम कभी कभी परिस्थितिवश बहुत कठोर हो जाते हैं, किसी के दुःख से कोई मतलब नहीं रखना चाहते। हमें पता होने पर भी किसी की सहायता की बात भी नहीं करना चाहतें हैं। नामदेवजी महाराज ने रोटी बनाकर रखी, एक कुत्ता आया रोटी उठाकर ले गया, नामदेवजी उसके पीछे पीछे दौड़े, भगवन् घी तो चुपड़ें। रूखी रोटी क्यों ले जाते हो। सन्तजन सबमें भगवान का दर्शन करने का स्वभाव रखते हैं। हम तो वातावरण को ठण्डी करने वाली मशीन लगवा लेते हैं, मन्दिर में पङ्खा भी नहीं लगाते। आलीशान मकान बनवाते हैं, पर भगवान का मन्दिर छोटा सा ही होता है। पूजा स्थल कम से कम इतना बड़ा होना चाहिए कि दस से पन्द्रह व्यक्ति भजन भाव जप कर सकें। छोटा मन्दिर भी बड़े काम का है। भाव से पूजा करें तो। मन लगा कर भजन करें।

भज गोविन्दम् भज गोविन्दम्,
गोविन्दं भज मूढ़मते।
संप्राप्ते सन्निहिते काले,
न हि न हि रक्षति डुकृञ् करणे॥

श्रीभगवान कहते हैं, इस संसार में मुरारी ही पार लगा सकते हैं। अपनी मूढ़ मति को समझाओ कि गोविन्द को भजो। बुद्धि को समझाना पड़ेगा कि समय पर पूजा करनी ही है।

ह्री-

ये हमारा रक्षक का काम करती है। जब हम कुछ भी ग़लत करते हैं, तो सोचते हैं कि लोग क्या कहेंगे? पाँच साल के बच्चे को भी पता है कि क्या अच्छा है क्या बुरा है? फिर हम इतने प्रबुद्ध हो गए हैं तो क्या हमें नहीं पता, क्या सही और क्या ग़लत है। **ह्री** हमारा रक्षक बनता है।

अचापलम्-
चञ्चलता रहित। हम बैठे हैं तो भी पैर हिलाते रहते है। गीता पाठ करते हुए, लोगों को घूम कर देखेंगे। बगीचे में बैठे हैं, घास उखाड़ रहे होते हैं। शान्ति से बैठ नहीं सकते। ध्यान में भी कितनी बातें सोच लेते हैं। सन्देशों को देखते रहेंगे। चञ्चलता बच्चों के लिए ठीक है। नीरसता जीवन में नहीं लानी है, धीरे-धीरे गम्भीरता लानी है।

16.3

तेजः क्षमा धृतिः(श्) शौचम्, अद्रोहो नातिमानिता।
भवन्ति सम्पदं(न्) दैवीम्, अभिजातस्य भारत।।16.3।।

तेज (प्रभाव), क्षमा, धैर्य, शरीर की शुद्धि, वैर भाव का न होना (और) मान को न चाहना, हे भरतवंशी अर्जुन ! (ये सभी) दैवी सम्पदा को प्राप्त हुए मनुष्य के (लक्षण) हैं।

विवेचन-श्रीभगवान आगे दैवीय गुण **तेज** के बारे में बताते हैं। कई सन्तों और महापुरुषों का ऐसा प्रभा-मण्डल होता है कि उनको देखते ही प्रणाम करने का मन होता है। उनके मुख का वो तेज भोजन से ही आता है।

भोजन से रक्त का निर्माण होता है, रक्त से माँस, माँस से अस्थि, अस्थि से मज्जा, मज्जा से वीर्य, वीर्य से ओज, ओज से ही तेज का निर्माण होता है। हम जो खाते हैं उसका सीधा प्रभाव हमारे तेज पर पड़ता है। जो बासी या जङ्क भोजन खाते हैं, उनके चेहरे पर मलिनता रहती है। साधन, भजन करने से, शुद्ध भोजन से मुख पर तेज़ आता है।

क्षमा-
क्षमा का भाव होना चाहिए, क्षमा शक्तिशालियों का गुण है। ऐसा क्यों कहा? सेव, मैं नहीं खाऊँगा, सेव होगा तब तो नहीं खाऊँगा। क्षमा को शक्तिशाली गुण क्यों कहा? एक पहलवान को कह दिया, मैं तुम्हें क्षमा करता हूँ। उसको मैं जीत तो सकता ही नहीं, ये क्षमा है क्या? सामर्थ्य नहीं है। योग्यता हो क्षमा की, तभी क्षमा करेंगे। क्षमा करने के दस साल बाद भी हम दोहराते हैं कि गलती की तुम्हें क्षमा करके। उसे क्षमा नहीं कहेंगे, क्षमा करो और भूल जाओ।

धृतिः-
धैर्य धारण करना पड़ता है। गीताजी पढ़ना सीखें, विचार आया कि एक साल लगेंगे, पूरे होने में। पहले पता होता तो शुरू ही नहीं करते। गीता वाचन में मात्र तीन श्लोक सीखते हैं।

शौच-
शुद्धता का पालन करना चाहिए। अन्तःकरण और बाहर दोनों ओर की शुद्धता पर ध्यान देना चाहिए। कई जन भोजन के पहले कीटाणु नाशक द्रव्य लगा कर भोजन कर लेते हैं। हाथ शुद्ध हो गया। ऐसा कदापि नहीं करना चाहिए। पानी मिले तो पानी से ही हाथ धोना चाहिए।

अद्रोहो-
द्रोह नहीं आना चाहिए। किसी के प्रति भी बुरा करने की, हानि पहुँचाने का भाव नहीं होना चाहिए।

नातिमानिता-
नाति मानिता। हम जितने हैं, उससे ज़्यादा अपने को मान लेते हैं। छोटे होकर भी बड़ा दिखाते हैं। अहङ्कार को छोड़ कर चलना होगा। तुलसीदास जी जैसे सन्त भी विनय पत्रिका में अपने को छोटा और अधम कहते हैं। छोटा, बड़ा, कुटिल, कामी क्या-क्या

अपने को रामजी के सामने बताते हैं।

हम तो अपने को बहुत बड़ा मानते हैं। किसी मीटिङ्ग में बैठे हैं, कॉल उठाते ही गुस्सा करते हैं, दस जन कतार में प्रतीक्षा कर रहे हैं। आपने मेरा समय बर्बाद कर दिया। निरहङ्कारी बनना होगा।

श्रीभगवान बोलते हैं- हे भारत! दैवीयसम्पदा प्राप्त मनुष्य के ये लक्षण हैं।
ये दैवीय गुण जैसे जैसे बढ़ेंगे, हम भक्ति मार्ग पर आगे बढ़ते जाएँगे।

हरि शरणम्, हरि शरणम्, हरि शरणम् सङ्कीर्तन के साथ विवेचन सत्र सम्पन्न हुआ।

प्रश्नोत्तर-

प्रश्नकर्ता- देवेन्द्र भैया
प्रश्न- सबसे बड़ा दान धन के अतिरिक्त ज्ञान है क्या?
उत्तर- दान कई प्रकार के हैं। धन का दान, समय का दान, विद्या का दान ज्ञान का दान, स्वच्छता का दान, प्रसन्नता का दान। हम इन सबका दान कर सकते हैं। परन्तु कोई दान किसी से श्रेष्ठ नहीं है।

प्रश्नकर्ता- उर्मिला दीदी
प्रश्न- मुझे गुस्सा जल्दी आ जाता है, क्या करे?
उत्तर- अभ्यास से ही सब सम्भव है, यदि हम अपना कोई भी दोष छोड़ना चाहते हैं तो वह स्थिति आने के पूर्व ही खूब विचार करें कि क्रोध आने पर हमें क्या करना है क्या नहीं करना है। अच्छी तरह से विचार करके जब भी वैसी परिस्थिति आती है, आप कुछ मत बोलिये। याद दिलाइये कि हमें ऐसा नहीं करना है। **अभ्यासेन तु कौन्तेय** हम अभ्यास के द्वारा हर दोष अवगुण पर विजय पा सकते हैं।

प्रश्नकर्ता- काली चरण भैया
प्रश्न- ह्रीरचापलम् का क्या अर्थ है?
उत्तर- ह्री: का अर्थ है लज्जा, अचापलम् का तात्पर्य है, चपड़ता का न होना।

प्रश्नकर्ता- आशा दीदी
प्रश्न- मैं दूसरों के लिये कुछ करना चाहती हूँ , लेकिन घर वालों की आज्ञा नहीं है, क्या करूँ?
उत्तर- घर में रहकर ही भक्ति करिये एवम् घर के भी कार्य करिये, वह भी ईश्वर की पूजा ही है। श्रीभगवान उचित समझेंगे तो समय आने पर स्वयम् ही मार्ग मिल जाएगा।

प्रश्नकर्ता- विजय भैया
प्रश्न- सर्वश्रेष्ठ दान कौन सा है? मैंने सुना है कि ज्ञान दान सर्वश्रेष्ठ है?
उत्तर- कौन सा दान श्रेष्ठ है, यह अप्रासङ्गिक है। जो दान जिस समय दिया जाता है, उसी की श्रेष्ठता बताई जाती है। धनदान, अन्नदान, विद्यादान, ज्ञानदान, स्वच्छतादान अपनी योग्यता एवम् क्षमता के अनुसार किये जाते हैं।

हमें विश्वास है कि आपको विवेचन की रचना पढ़कर अच्छा लगा होगा। कृपया नीचे दिए लिंक का उपयोग करके हमें अपनी प्रतिक्रिया दीजिए।

https://vivechan.learngeeta.com/feedback/

विवेचन-सार आपने पढ़ा, धन्यवाद!
हम सब गीता सेवी, अनन्य भाव से प्रयास करते हैं कि विवेचन के अंश आप तक शुद्ध वर्तनी में पहुंचे। इसके बाद भी वर्तनी या भाषा संबंधी किन्हीं त्रुटियों के लिए हम क्षमा प्रार्थी हैं।

जय श्री कृष्ण !
संकलन: गीता परिवार - रचनात्मक लेखन विभाग

हर घर गीता, हर कर गीता!
Let's come together with the motto of Geeta Pariwar, and gift our Geeta Classes to all our Family, friends & acquaintances

https://gift.learngeeta.com/

गीता परिवार ने एक नवीन पहल की है। अब आप पूर्व में सञ्चालित हुए सभी विवेचनों कि यूट्यूब विडियो एवं पीडीऍफ़ को देख एवं पढ़ सकते हैं। कृपया नीचे दी गयी लिंक का उपयोग करे।

https://vivechan.learngeeta.com/

|| गीता पढ़े, पढ़ायें, जीवन में लाये ||
||ॐ श्रीकृष्णार्पणमस्तु ||